योग साधना के आठ अङ्ग

ज्ञानेश्वरार्यः

एम. ए. दर्शनाचार्य

प्रकाशक

दर्शन योग महाविद्यालय

आर्य वन, रोजड़, पो. सागपुर,

जि. साबरकांठा, गुजरात-३८३३०७.

दूरभाष : (०२७७४) ७७२१७

।। ओ३म् ।।

महर्षि पतञ्जलि द्वारा बताये गये

योग साधना के आठ अङ्ग

(नाम, परिभाषा एवं फल)

ज्ञानेश्वरार्य :
दर्शनाचार्य (M.A.)
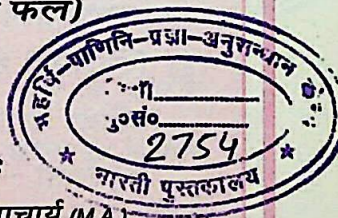
प्रकाशक :
दर्शन योग महाविद्यालय
आर्यवन विकास क्षेत्र, रोजड़, पत्रा.-सागपुर,
जि.-साबरकांठा, गुजरात-३८३३०७

YOGA SADHANA KE AATHA ANGA

BY:- GYANESHWAR ARYA
M.A. DARSHANACHARYA

संस्करण : पंचम
प्रकाशन तिथि : (मई १९९८) ज्येष्ठ २०५५

प्राप्तिस्थान :

(१) दिनेशभाई सुखडिया
प्रतिक्षा अपार्टमेन्ट्स, सोला रोड,
कर्णावती - ३८० ०६३

(२) दर्शन योग महाविद्यालय
आर्यवन रोजड़, पो. सागपुर,
जि. साबरकांठा (गुजरात) - ३८३ ३०७.
दूरभाष : (०२७७४) ७७२१७

लागत व्यय : २-०० रूपये

मुद्रक : आकृति प्रिन्टर्स, अहमदाबाद

योग के आठ अङ्ग हैं-

१. यम
२. नियम
३. आसन
४. प्राणायाम
५. प्रत्याहार
६. धारणा
७. ध्यान
८. समाधि

योग का जो प्रथम अङ्ग 'यम' है, उसके पांच विभाग हैं १. अहिंसा २. सत्य ३. अस्तेय ४. ब्रह्मचर्य ५. अपरिग्रह ।

यम के पांच विभागों की परिभाषाएं

१. **अहिंसा**-शरीर, वाणी तथा मन से सब काल में समस्त प्राणियों के साथ वैरभाव (द्वेष) छोड़कर प्रेमपूर्वक व्यवहार करना 'अहिंसा' कहलाती है ।

२. **सत्य**–जैसा देखा हुआ, सुना हुआ, पढ़ा हुआ, अनुमान किया हुआ ज्ञान मन में है, वैसा ही वाणी से बोलना और शरीर से आचारण में लाना '**सत्य**' कहलाता है ।

३. **अस्तेय**–किसी वस्तु के स्वामी की आज्ञा के बिना उस वस्तु को न तो शरीर से लेना, न लेने के लिये किसी को वाणी से कहना और न ही मन में लेने की इच्छा करना '**अस्तेय**' कहलाता है ।

४. **ब्रह्मचर्य**–मन तथा इन्द्रियों पर संयम करके वीर्य आदि शारीरिक शक्तियों की रक्षा करना, वेदादि सत्य शास्त्रों को पढ़ना तथा ईश्वर की उपासना करना '**ब्रह्मचर्य**' कहलाता है ।

५. **अपरिग्रह** - हानिकारक एवं अनावश्यक वस्तुओं का तथा हानिकारक एवं अनावश्यक विचारों का संग्रह न करना **'अपरिग्रह'** कहलाता है ।

योग का जो द्वितीय अङ्ग **'नियम'** है, उसके भी पांच विभाग हैं-

१.शौच २.सन्तोष ३.तप ४.स्वाध्याय ५. ईश्वरप्रणिधान ।

नियम के पांच विभागों की परिभाषाएं

१. **शौच (शुद्धि)** - शुद्धि दो प्रकार की है-पहली बाह्य शुद्धि और दूसरा आन्तरिक शुद्धि। शरीर, वस्त्र, पात्र, स्थान, खानपान तथा धनोपार्जन को पवित्र रखना **'बाह्य शुद्धि'** है तथा विद्या, सत्संग, स्वाध्याय, सत्यभाषण व धर्माचरण से

मन-बुद्धि आदि अन्तःकरण को पवित्र करना 'आंतरिक शुद्धि' कहलाती है ।

२. **संतोष** - अपने पास विद्यमान ज्ञान, बल तथा साधनों से पूर्ण पुरुषार्थ करने के पश्चात् जितना भी आनन्द विद्या, बल, धनादि फल रूप में प्राप्त हो, उतने से ही संतुष्ट रहना, उससे अधिक की इच्छा न करना **'संतोष'** कहलाता है ।

३. **तप** - धर्माचरणरूप उत्तम, कर्तव्य कर्मों को करते हुये भूख, प्यास, सर्दी-गर्मी, हानि-लाभ, मान-अपमान, आदि द्वन्द्वों को प्रसन्नतापूर्वक सहन करना **'तप'** कहलाता है ।

४. **स्वाध्याय**-मोक्ष की प्राप्ति कराने वाले वेदादि सत्य शास्त्रों को पढ़ना, **'ओ३म्'** आदि पवित्र मन्त्रों का जप करना तथा आत्मचिंतन करना

स्वाध्याय कहलाता है ।

५. **ईश्वर प्रणिधान**–शरीर, बुद्धि, बल, विद्या, धनादि, समस्त साधनों को ईश्वरप्रदत्त मानकर, उनका प्रयोग मन, वाणी तथा शरीर से ईश्वर की प्राप्ति के लिए ही करना, लौकिक उदेश्य–धन, मान, यशादि की प्राप्ति के लिए न करना **'ईश्वर–प्रणिधान'** कहलाता है । ईश्वर मुझे देख, सुन, जान रहा है, यह भावना भी मन में बनाये रखना, **'ईश्वर प्रणिधान'** है ।

अब योग के शेष ६ अङ्गों की परिभाषा बतायी जाती है ।

३. **आसन** ईश्वर के ध्यान के लिये जिस स्थिति में सुखपूर्वक, स्थिर होकर बैठा जाय, उस स्थिति का नाम **'आसन'** है । जैसे

पद्मासन, सिद्धासन, स्वस्तिकासन आदि ।

४. **प्राणायाम** किसी आसन पर स्थिरतापूर्वक बैठने के पश्चात् मन की चंचलता को रोकने के लिये, श्वास-प्रश्वास की गति को रोकने स्वरूप जो क्रिया की जाती है, उस क्रिया का नाम '**प्राणायाम**' है ।

५. **प्रत्याहार** मन के रुक जाने पर नेत्रादि इन्द्रियों का अपने-अपने रूपादि विषयों के साथ सम्बन्ध नहीं रहता, अर्थात् इन्द्रियाँ शान्त होकर अपना कार्य बन्द कर देती हैं, इस स्थिति का नाम '**प्रत्याहार**' है ।

६. **धारणा** ईश्वर का ध्यान करने के लिये आंख बन्द करके मन को मस्तक, भ्रूमध्य, नासिका, कण्ठ, हृदय, नाभि आदि किसी एक

स्थान पर स्थिर करने या रोकने का नाम **'धारणा'** है।

७. **ध्यान** किसी एक स्थान पर मन को स्थिर कर देने के पश्चात् वेदमंत्र या अन्य शब्दों के माध्यम से, ईश्वर को प्राप्त करने (जानने), अनुभव करने के लिये, ईश्वर के गुण-कर्म स्वभाव का निरन्तर चिंतन करना, किन्तु बीच में किसी अन्य वस्तु या विषय का स्मरण न करना, **'ध्यान'** कहलाता है।

८. **समाधि** 'शब्द प्रमाण' तथा 'अनुमान प्रमाण' के माध्यम से ईश्वर के गुण-कर्म स्वभाव का निरन्तर चिन्तन करते रहने पर ज़ब ईश्वर का 'प्रत्यक्ष' होता है अर्थात् ईश्वर के आनन्द में साधक निमग्न हो जाता है तब उस अवस्था को **'समाधि'**

कहते हैं ।

योग के आठ अङ्गों का फल

अब क्रमशः यम-नियम आदि योग के आठ अङ्गों का फल क्या होता है, यह लिखते हैं :

सर्व प्रथम 'यमों' का फल लिखते हैं -

१. **अहिंसा** अहिंसा धर्म का पालन करने वाले व्यक्ति के मन से समस्त प्राणियों के प्रति वैर भाव (द्वेष) छूट जाता है, तथा उस अहिंसक के सत्सङ्ग एवं उपदेशानुसार आचरण करने से अन्य व्यक्तियों का भी अपनी-२ योग्यतानुसार वैर-भाव छूट जाता हैं ।

२. **सत्य** जब मनुष्य निश्चय करके मन, वाणी तथा शरीर से सत्य को ही मानता, बोलता

तथा करता है तो वह जिन-जिन उत्तम कार्यों को करना चाहता है, वे सब सफल होते हैं ।

३. **अस्तेय** मन, वाणी तथा शरीर से चोरी छोड़ देनेवाला व्यक्ति, अन्य व्यक्तियों का विश्वासपात्र और श्रद्धेय बन जाता है। ऐसे व्यक्ति को आध्यात्मिक एवं भौतिक उत्तम गुणों व उत्तम पदार्थों की प्राप्ति होती है ।

४. **ब्रह्मचर्य** मन, वचन तथा शरीर से संयम करके, ब्रह्मचर्य का पालन करने वाले व्यक्ति को, शारीरिक तथा बौद्धिक बल की प्राप्ति होती है ।

५. **अपरिग्रह** अपरिग्रह धर्म का पालन करने वाले व्यक्ति में आत्मा के स्वरूप को जानने की इच्छा उत्पन्न होती है, अर्थात् मैं कौन हूँ,

कहाँ से आया हूँ, कहाँ जाऊंगा, मुझे क्या करना चाहिये, मेरा क्या सामर्थ्य है इत्यादि प्रश्न उसके मन में उत्पन्न होते हैं ।

अब नियमों का फल लिखते हैं –

१. **शौच (शुद्धि)** बार-बार शुद्धि करने पर भी जब साधक व्यक्ति को अपना शरीर गंदा ही प्रतीत होता है तो उसकी अपने शरीर के प्रति आसक्ति नहीं रहती और वह दूसरे व्यक्ति के शरीर के साथ अपने शरीर का सम्पर्क नहीं करता । आन्तरिक शुद्धि से साधना की शुद्धि बढ़ती है, मन एकाग्र तथा प्रसन्न रहता है, इन्द्रियों पर नियंत्रण होता है तथा वह आत्मा-परमात्मा को जानने का सामर्थ्य भी प्राप्त कर लेता है ।

२. **संतोष** संतोष को धारण करने पर

व्यक्ति की विषय भोगों को भोगने की इच्छा नष्ट हो जाती है और उसको शांतिरूपी विशेष सुख की अनुभूति होती हैं ।

३. (तपः) तपस्या का अनुष्ठान करने वाले व्यक्ति का शरीर, मन तथा इन्द्रियां बलवान तथा दृढ़ होती हैं तथा वे उस तपस्वी के अधिकार में आ जाती हैं ।

४. (स्वाध्याय) स्वाध्याय करने वाले व्यक्ति की आध्यात्मिक पथ पर चलने की श्रद्धा, रुचि बढ़ती है तथा वह ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभावों को अच्छी प्रकार जानकर उसके साथ सम्बन्ध भी जोड लेता है ।

५. (ईश्वर प्रणिधान) ईश्वर को अपने अन्दर-बाहर उपस्थित मानकर तथा ईश्वर मेरे

को देख, सुन, जान रहा है, ऐसा समझने वाले व्यक्ति की समाधि शीघ्र ही लग जाती है।

अब योग के शेष ६ अंगों का फल लिखते हैं

३. **आसन** आसन का अच्छा अभ्यास हो जाने पर योगाभ्यासी को उपासना काल में तथा व्यवहार काल में सर्दी-गर्मी, भूख-प्यास आदि द्वन्द्व कम सताते हैं, तथा योगाभ्यास की आगे की क्रियाओं को करने में सरलता होती है।

४. **प्राणायाम** प्राणायाम करने वाले व्यक्ति का अज्ञान निरन्तर नष्ट होता जाता है तथा ज्ञान की वृद्धि होती है। स्मृतिशक्ति तथा मन की एकाग्रता में आश्चर्यजनक वृद्धि होती है। वह रोग-रहित होकर उत्तम स्वास्थ्य को प्राप्त होता है।

५. **प्रत्याहार** प्रत्याहार की सिद्धि होने से योगाभ्यासी का इन्द्रियों पर अच्छा नियंत्रण हो जाता है अर्थात् वह अपने मन को जहां और जिस विषय में लगाना चाहता है, लगा लेता है तथा जिस विषय से मन को हटाना चाहता है, हटा लेता है।

६. **धारणा** मन को एक ही स्थान पर स्थिर करने के अभ्यास से ईश्वर विषयक गुण-कर्म स्वभावों का चिन्तन करने से (ध्यानमें) दृढ़ता आती है, अर्थात् ईश्वर विषयक ध्यान शीघ्र नहीं टूटता। यदि टूट भी जाय तो दोबारा सरलतापूर्वक किया जा सकता है।

७. **ध्यान** ध्यान का निरंतर अभ्यास करते रंहने से समाधि की प्राप्ति होती है तथा

उपासक व्यवहार सम्बन्धी समस्त कार्यों को दृढ़तापूर्वक, सरलता से सम्पन्न कर लेता है।

८. **समाधि** समाधि का फल है, ईश्वर का साक्षात्कार होना। समाधि अवस्था में साधक समस्त भय, चिन्ता, बन्धन आदि दुःखों से छूटकर ईश्वर के आनन्द की अनुभूति करता है तथा ईश्वर से समाधि काल में ज्ञान, बल, उत्साह, निर्भयता, स्वतन्त्रता आदि की प्राप्ति करता है। इसी प्रकार बारम्बार समाधि लगाकर अपने मन पर जन्म जन्मान्तर के राग द्वेष आदि अविद्या के संस्कारों को दग्धबीजभाव अवस्था में पहुंचाकर (नष्ट करके) मुक्ति पद को प्राप्त कर लेता है।